घनानन्द की विरहानुभूति

वेदना हृदय को मादक टीस है तथा विरह प्रेम की कसौटी है। प्रेम की तीव्रता विरह से ही मापी जाती है। संयोग काल में प्रिय के रूप दर्शन एवं सानिध्य के कारण प्रेमी का हृदय वासनाभिभूत रहता है, किन्तु विरह मे वासना का कलुष नष्ट हो जाता है और जो कुछ शेष बचता है, वह पूर्णत उदात्त सात्विक एवं निष्कलुष होता है। विरह से ही प्रेमियो की दृढता निष्ठा, अनन्यता एवं आत्म-रता का बोध होता है इसीलिए विरह काव्य सर्वाधिक मार्मिक, चित्ताकर्षक एवं हृदयद्रावक माने गए हैं।

घनानन्द विरही थे। उनकी सुजान ने उनके साथ विश्वासघात किया था इसीलिए उनका हृदय सुजान के प्रति उत्कट प्रेम एवं विरह से युक्त था। घनानन्द की विरह वेदना स्वानुभूत होने से अत्यधिक मार्मिक एवं प्रभावोत्पादक बन गई है। उसमे जो कुछ टीस, कसक एवं तड़प है वह सब आन्तरिक है विरह की बाहरी नाप-जोख उसमे नही है। बिहारी के विरह वर्णन मे जहाँ शारीरिक ताप एवं विरहजन्य कृशता का अत्युक्तिपूर्ण उल्लेख है, वही घनानन्द के विरह वर्णन मे हृदय की आन्तरिक हलचल है; इसीलिए वह क्रियाए बाहर से प्रशान्त एवं स्वानुभूत है तथा उसमे हृदय गम्भीर दिखाई

PAGE NO.:
DATE:

पड़ता है। घनानन्द की विरह वेदना अकृत्रिम एवं स्वानुभूत है तथा उसमें हृदय पक्ष की प्रधानता है। उनके विरह वर्णन का निरूपण निम्न शीर्षकों में किया जा सकता है :

1) विरह की तीव्रता :-

घनानन्द के हृदय में प्रिय का रूप इस तरह बसा हुआ है कि एक पल भी सुजान का वह रूप उनकी आँखो से ओझल नहीं होता। उनके उत्कट विरह का मूल कारण यही रूपासक्ति है। प्रिय के रूप की विभिन्न छवियां उनकी कल्पना में घूमती रहती है। वह रूप उनके हृदय मे ऐसा बस गया है कि उसे निरन्तर देखने की प्रबल इच्छा मन मे बनी रहती है। आँखो की कुछ ऐसी आदत बन गई है कि वे उस रूप को देखकर ही तृप्त होती हैं। अपनी इस रूपासक्ति का उल्लेख करते हुए घनानन्द सुजान को सम्बोधित करते हुए कहते हैं:

रावरे रूप की रीति अनूप नयो-नयो लागत ज्यो-ज्यो निहारिए।
त्यो इन आँखिन बानि अनोखी अघानि कहूं नाहि आन तिहारिए।
एक ही जीव हुतो सु तो वार्यो सुजान संकोच औ सोच सहारिए।
रोकी रहै न दहै घन आनन्द बावरी रीझि के हाथनु हारिए।

मैं तो इस पागल बना देनेवाली प्रीति के हाथो मे पड़कर बुरी तरह हार गया हूँ। वह रोकने पर रुकती नही और भीतर ही भीतर मुझे जलाती रहती है।

2) हार्दिक अनुभूति का चित्रण :-

घनानन्द के विरह मे न बाहरी उछल कूद है और न कृत्रिमता। उसमें स्वानुभूत वेदना का सरल, स्वच्छन्द एवं अकृत्रिम चित्रण किया गया है। जहाँ हार्दिक अनुभूतियो का चित्रण होता है वहाँ आडम्बर और प्रदर्शन के लिए कोई स्थान नहीं होता। विरही की दशा बड़ा विचित्र होती है। उसे एक साथ अनेक विरोधाभासो मे जीना पड़ता है। उसका हृदय तो उद्वेग की आग मे जलता है, किन्तु आँखो से अश्रुवर्षा होती रहती है, इस प्रकार वह जलता भी है और भीगता भी है :

अन्तर उदेग दाह आँखिनु प्रवाह आँसू
देखी अटपटी चाह भीजनि दहनि है।
सोइबो न जागिबो हू, हँसिबो न रोइबो हू
खोय-खोय आपही मे चेटक लहनि है।

3) प्रिय की निष्ठुरता :-

घनानन्द का प्रेम विषम प्रेम है। वे सुजान के प्रति जितने उत्कट प्रेम से भरे हुए है, उतनी ही निष्ठुरता एवं निर्ममता वह दिखाती है।

प्रिय की यह निर्दयता, निष्ठुरता घनानन्द को अपने मार्ग से डिगा नहीं पाती। वे उपालम्भ देते हुए कहते हैं कि तुमने पहले तो मीठे-मीठे बोल सुनाकर मुझे अपने प्रेम जाल में फाँस लिया और अब इस प्रकार से हृदय को जला रहे हो, यह कहाँ का न्याय है? कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें भी मेरी तरह जीवन में बेचैन होना पड़े

अहो अति निठुर मिताय पहिचानि डारी,
याही दुख हमें जक लागी हाय-हाय है।
तुम तो निपट निरदई गई भूलि सुधि,
हमें सूल सेलनि सो क्यो हू न भुलाय है॥
मीठे-मीठे बोल बोलि ठगी पहले तो आय,
अब जिय जारत कहो धौं कौन न्याय है
सुनी है कि जाही यह प्रगट कहावति जू,

5) अन्तर्वृत्तियों की अधिकता :-
घनानन्द के विरह में मनोवेगों की प्रधानता है तथा हृदय की टीस, तड़प आदि वेदना को वे अपने काव्य में व्यक्त करते हैं। वे अन्य रीतिकालीन कवियों की भाँति शास्त्रीय पद्धति पर विरह निरूपण नहीं करते अपितु मन में उठने वाले भावों का यथातथ्य चित्रण करते हैं उनका हृदय व्याकुलता की आग में जलता रहता है। अंग-प्रत्यंग विरह विकल होकर उबलते से रहते हैं, प्राण निरन्तर विरह-वेदना में तप्त होते हैं और इस कारण

ते धैर्य धारण नहीं कर पाते :

अन्तर आंच उसास तचै अति अंग उसीजै उदेग की आवत
ज्यों कहलाय मसोसनि ऊमस क्यो हू कहूं सुधरै नहि थ्यावत।

प्रिय को पाने के लिए वे क्या नहीं कर सकते? यदि प्रिय की प्राप्ति सम्भव हो तो वे धरती में धंसने और आकाश को चीरने के लिए भी तत्पर हैं। यहाँ लाक्षणिक अर्थ यह है कि प्रिय से मिलन हेतु वे असम्भव को भी सम्भव कर सकने की सामर्थ्य रखते हैं:

जौ घन आनन्द ऐसी रूची तौ कहा बस है अहो प्रानिनि पीसैं।
पाऊं कहां हरि हाय तुम्हैं धरती मे धसौं कै अकासहिं चीरैं।

5) उपालम्भ भावना :

घनानन्द एकनिष्ठ अनन्य प्रेमी थे जबकि सुजान मे उनके प्रति निश्छल प्रेम भावना नहीं दिखाई। इसीलिए घनानन्द उसके प्रति उपालम्भ भाव से भरे हुए हैं। इस उपालम्भ मे उनका उत्कट प्रेम भाव व्यंजित है। वे प्रिय को कपटी, विश्वासघाती, निर्मोही, निर्दय कहते हैं और स्वयं को दीन-हीन

दर्शी भावानिता प्रेमी बताते हैं। प्रिय सुजान के छल व्यवहार की आलोचना करते हुए और उन्हें उपालम्भ देते हुए वे अपने हार्दिक उद्गारों को निम्न शब्दों में व्यक्त करते हैं :

क्यों हँसि हेरि हरयो हियरा अरु क्यों हित के चित चाह चढ़ाई।
काहे को बोलि सुधासने बैननि चैननि मैन निसैन चढ़ाई।
सो सुधि मो हिय मे घनआनन्द सालति क्यो हू कढ़ै न कढ़ाई।
मीत सुजान अनीति की पाटी इतै पै न जानिए कौने पढ़ाई।

6) विषम प्रेम का चित्रण :-
उभयपक्षीय प्रेम में संयोग सुख के मादक चित्र देखे जाते हैं। किन्तु एकपक्षीय एकांगी प्रेम में हृदय की तड़प, चीत्कार एवं प्रिय की निष्ठुरता का निरूपण घनानन्द का सुजान होता है जिससे वह मार्मिक एवं हृदयद्रावक बन जाता है। घनानन्द का सुजान के प्रति प्रेम भी इसी प्रकार का है इसीलिए वह विषम प्रेम है। उसका घनानन्द के हृदय में सुजान के लिए जितनी व्याकुलता है उसका एक अंश भी सुजान के हृदय में दिखाई नहीं देता। वह तो सुजान के लिए तड़पते हैं, पर सुजान को उनकी रंचमात्र भी चिन्ता नहीं। घनानन्द को इस बात की भी परवाह नहीं कि प्रिय उन्हें चाहता है या नहीं, वे

निर्द्वन्द्व भाव से उसे प्रेम किया जाता है:

चाहौ अनचाहौ जान प्यारे पै अनंद घन,
प्रीति रीति विषम सु रोम-रोम रमी है।

7) प्रकृतिगत उद्दीपन का चित्रण:

घनानन्द की विरह वेदना प्रकृति के उद्दीपन से और भी बढ़ गई है। प्रकृति उनके विरह को उद्दीप्त कर रही है। यह कोयल कूक-कूक कर न जाने किस जन्म का बैर निकाल रही है, मोर और चातक भी कान फोड़ रहे है, पुरवैया हवा अंगों को जला रही है। लगता है प्रकृति के ये सभी उपादान दल बाँधकर वियोगी घनानन्द को सताने का प्रण ठानकर सक्रिय हो गया है:

कारी कूर कोकिला कहाँ को बैर काढ़ति री।
कूकि-कूकि अब ही करेजो किन कोरि लै।
पैड़ परे पापी ये कलापी निस द्यौस ज्यो ही,
चातक घातक त्यौं ही तुहू कान फोरि लै॥

8) सन्देश प्रेषणीयता:

विरही प्राय: प्रिय के पास अपनी विरह वेदना का सन्देश प्रेषित करने के लिए किसी न किसी की खोज मे रहते है। घनानन्द ने 'बादल' को अपना सन्देश वाहक बनाकर यह अनुरोध किया है

कि उस विश्वासघाती सुजान के आँगन में मेरे आँसुओं को ले जाकर बरसा दो ;

घन आनन्द जीवन दायक हौ कछु मेरिऔ पीर हियै परसौ
कबहूं वा विसासी सुजान के आँगन मो अंसुवानि हू लै बरसौ ॥

इसी प्रकार वे पवन से यह आग्रह करते हैं कि प्रिय की चरण रज ले आ, मैं उसे अपनी आँखों से लगाकर शांति पा लूंगा ;

एरे बीर पौन तेरो सबै ओर गौन बीरी
तो सो और कौन मनै ढरकौंहीं बानि दै ।

बिरह बिथा की मूरि आँखिन मे राखौं पूरि
धूरि तिन पांयन की हा-हा नेकु आनि दै ॥

घनानन्द के विरह में वासना की गन्ध तनिक भी नहीं है। उसमें कामुकता तो रंचमात्र भी नहीं है। वह पूरी तरह सात्विक उदात्त एवं दिव्य है। उसमें पवित्रता एवं आध्यात्मिकता के दर्शन होते हैं। उसमें हृदय की गहराई है, मनोव्यथा का सहज एवं स्वच्छन्द चित्रण है तथा विरहोद्गारों का स्वाभाविक कथन है। निस्सन्देह घनानन्द के विरह वर्णन में एक पावनता है तथा उसमें हृदय पक्ष की प्रधानता है। अपनी सात्विकता, उदात्तता सरलता एवं आध्यात्मिकता

के कारण घनानन्द का विरह वर्णन हिन्दी में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। उनका विरह स्वानुभूति पर आधृत है, वे अपनी अनुभूतियों को लिपिबद्ध कर रहे है। इसीलिए दिनकर जी ने घनानन्द के विरह पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि "वे अपने आँसुओं से रो रहे हैं, किराए के आँसुओं से नहीं।।" इस सात्विकता एवं उदात्तता के कारण ही घनानन्द को यदि विरह-सम्राट कहें तो अतिशयोक्ति न होगी।

घनानन्द की प्रेम व्यंजना

रीतिमुक्त स्वच्छन्द काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि घनानन्द महान प्रेमी थे। 'सुजान' से प्रेम करने वाले घानानन्द की सम्पूर्ण काव्य साधना प्रेमोद्गारों की अक्षय निधि है। इनकी प्रेम पद्धति वियोग व्यथा से ओतप्रोत है, वैयक्तिकता से जुड़ी हुई है और उसमे अलौकिकता, नवीनता, मार्मिकता कष्ट सहिष्णुता जैसे गुण विद्यमान हैं। उनकी कविता मे प्रेम का सरल, सहज एवं स्वच्छन्द रूप दिखाई पड़ता है जिसमे उदात्तता विद्यमान है। घानानंद प्रेम की पीर के कवि है। प्रेम विभोर हृदय की कोई ऐसी वृत्ति नहीं है जिसका चित्रण घनानंद ने न किया हो। इसीलिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है — " प्रेम की गूढ़ अन्तर्दशा का उद्घाटन जैसा इनमे है, वैसा हिन्दी के किसी अन्य श्रृंगारी कवि मे नहीं।"

घनानंद का प्रेम विशुद्ध लौकिक था। वे मुहम्मदशाह रंगीले के दरबार मे रहने वाली सुजान नामक वेश्या से प्रेम करते थे, किन्तु उसके छलकपट पूर्ण व्यवहार से वे भीतर तक व्यथित हो गए। उनका हृदय 'चाह के रंग' मे भीगा था। प्रिय भले ही निष्ठुर एवं निर्मम हो, किन्तु घनानंद एकनिष्ठ एवं अनन्य प्रेमी हैं। भले ही प्रिय ने उनके साथ विश्वासघात किया, किन्तु वे जीवन-पर्यन्त सुजान से प्रेम करते रहे। उनकी धारणा थी

कि प्रेममार्ग तो सरल, सीधा, निश्छल होता है जहाँ चतुराई और कपट के लिए रंचमात्र भी स्थान नहीं है :

अति सूधो स्नेह को मारग है जहँ नेकु सयानप बाँक नहीं।
तहाँ साँचे चलें तजि आपुनपौ झिझकें कपटी जे निसाँक नहीं।
घन आनन्द प्यारे सुजान सुनो इत एक ते दूसरो आँक नहीं।
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हो लला मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।

घनानंद के प्रेम में 'उपालम्भ' भावना भी दिखाई देती है। उन्हें प्रिय से यह शिकायत है कि यदि तुम्हें ऐसा ही निठुर एवं निर्मम व्यवहार करना था तो पहले अपने रूप जाल में मेरे मन को क्यों उत्पन्न किया ;

क्यों हँसि हेरि हर्यो हियरा अरु क्यों हित के चित चाह बढ़ाई ?
काहे को बोलि सुधासने बैननि चैननि मैन निसैन चढ़ाई ॥

वे पुरानी सुखद स्मृतियाँ अब उनके हृदय से निकलती नहीं तथा काँटे की तरह कसकती रहती हैं

पता नहीं सुजान को अनीति की यह पट्टी किसने पढ़ा दी है।

ऐसो हिय सुधि मो मे घनआनन्द सालति क्यों हू कढ़ै चाँह कढ़ाई।
मीत सुजान अनीति की पाटी इतै पै न जानिये कौन पढ़ाई॥

घनानंद के प्रेम की एक अन्य विशेषता है — नैसर्गिकता एवं अकृत्रिमता। वे स्वच्छन्द प्रेम के कवि हैं अतः उनका प्रेम चित्रण लंबी-चौड़ी परिपाटी मे न होकर नैसर्गिक है। प्रिय भले ही निष्ठुर हो पर वे तो चकोर की भाँति उस चन्द्रमा की ओर ही अमृत वर्षा के लिए टकटकी लगाए रहेंगे। वे कहते हैं:

चाहौ अनचाहौ जान प्यारे पै अनन्दघन
प्रीति रीति विषम सु रोम-रोम रमी है।
मोहि तुम एक तुम्हें मो सम अनेक आहि
कहा कछू चन्दहिं चकोरन की कमी है।

चन्द्रमा को चकोरों की कमी नहीं होती, चकोर को यह अच्छी तरह समझ रखना है। प्रेममार्ग पर घनानन्द बहादुरी से डटे हुए है। इसलिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल उनके सम्बन्ध मे लिखते है — "प्रेममार्ग का ऐसा प्रवीण और धीर पथिक तथा जबाँदानी का ऐसा दावा रखने वाला

ब्रजभाषा का दूसरा कवि नहीं हुआ।"

घनानन्द के प्रेम का मूल आधार तो सौन्दर्य ही है। उनकी प्रेयसी सुजान अनिंद्य सुन्दरी थी। उसका सौन्दर्य घनानन्द के रोम रोम में बसा है। स्थान-स्थान पर वे उसके इस सौन्दर्य का चित्रण बड़े मनोयोग से करते है। यह सौन्दर्य चिरनवीन है:

रावरे रूप की रीति अनूप नयो-नयो लागत ज्यों ज्यों निहारिए॥
त्यों इन आँखिन बानि अनोखी अघानि कहूं नाहिं आनि निहारिए॥
एक ही जीव हुतौ सु तो वारयो सुजान सकोच और सोच सहारिए।
रोकी रहै न दहै घनआनन्द बावरी रीझि के हाथनु हारिए।

घनानन्द के प्रेम कष्ट सहिष्णुता का गुण विद्यमान है। वे हर प्रकार का कष्ट सहन करने को तैयार है। उन्होंने अनेक प्रकार के कष्टों में तपते हुए प्रिय के निष्ठुर हृदय में दया उत्पन्न करने का प्रण लिया हुआ है। वे आशा की रस्सी से विश्वास के पत्थर को हृदय पर बाँधकर प्रेम के समुद्र में डूबने को तत्पर है:

आस गुन बाँधि के भरोसो सिल धरि छाती
पूरे पन सिन्धु मे न बूडत सकाय हो।

उनका एकमात्र उद्देश्य है कि वह अपने कष्टमय जीवन को दिखाकर प्रिय के निष्ठुर हृदय मे दया उत्पन्न करे :

ऐसे घन आनन्द गही है टेक मन माँहि,
ए रे निरदई तोहि दया उपजाय हो॥

घनानन्द विरही है। उनके हृदय मे विरह का अथाह सागर हिलोरें ले रहा था। उनके विरह मे बाहरी उछल कूद, शारीरिक ताप की अधिकता या विरहजन्य कृशता का उल्लेख नही है अपितु उसमे हृदय की तपन, वेदना की अतिशयता एवं विरहाकुलता है। विरह ही उनके प्रेम की कसौटी है। वे चिरंतन वेदना से युक्त ऐसे प्रेमी है जिनके प्राण रात - दिन इस विरह वेदना मे घुट - घुटकर जलते रहते है। आँखो से अश्रु प्रवाहित होते रहते है :

रैन दिना घुटिबो करै प्रान झरै अँखियाँ दुखिया झरना सी।
प्रीतम की सुधि अन्तर मे कसकै सखि ज्यो पसरीन मे गाँसी॥

घनानन्द का प्रेम यद्यपि लौकिक है तथापि

उसमें कहीं - कहीं अलौकिकता की झलक भी मिलती है। यथा :

पाऊँ कहाँ हरि हाय तुम्हें धरती में धसै कै अकासहि चीरौं ।।

हे प्रभु मैं तुम्हें कहाँ खोजूँ क्या इसके लिए मैं धरती को फाड़कर उसमें धसूँ या आकाश को चीर डालूँ ?

घनानन्द की प्रेम व्यंजना सूक्ष्म है, उसमें स्थूलता एवं मांसलता का नितान्त अभाव है। उसमें उदात्तता, दिव्यता एवं पावनता है जो पाठक के हृदय को भी इन्हीं भावों से ओतप्रोत कर देता है।

बिहारी की काव्यकला

बिहारी रीतिकाल के प्रतिनिधि कवि है। उन्होने एकमात्र ग्रन्थ बिहारी सतसई की रचना की। जिसमे 713 दोहे है। उन्होने दोहे जैसे छोटे छन्द मे इतने अधिक भावो का समावेश किया है कि आलोचको को उनके विषय मे यह कहना पड़ा है — "बिहारी ने गागर मे सागर भर दिया है।" उनकी सतसई के बारे मे यह उक्ति प्रायः कही जाती है:

सतसइया के दोहरे ज्यों नावक के तीर।
देखन मे छोटे लगे घाव करैं गम्भीर ॥

बिहारी की अनुभूतियाँ जितनी सशक्त है उसकी अभिव्यक्ति कौशल भी उतना ही सफल है। वे जानते थे कि सभा समाजो के लिए दोहा ही सर्वाधिक उपयुक्त छन्द है जिसमे कुछ शब्दों के अन्तर्गत ही अपनी काव्य प्रतिभा दिखाई जा सकती है। सफल मुक्तककार के लिए दोहे से अच्छा छन्द कोई और नहीं हो सकता। बिहारी के काव्य मे भाव पक्ष एवं कला पक्ष दोनो का सन्तुलित समन्वय दिखाई पड़ता है जो उनकी काव्य दृष्टि का परिचायक है।

एक सफल मुक्तक काव्य की सभी विशेषताएँ "बिहारी सतसई" मे उपलब्ध होती है। मुक्तक उस रचना को कहा जाता है जो अपने मे अर्थ की दृष्टि से पूर्ण हो और जिसमे पूर्वापर सम्बन्ध का अभाव

है। बिहारी सतसई अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण लोकप्रिय काव्य रचना सिद्ध हुई है। संक्षेप में बिहारी की काव्यगत विशेषताओं का उद्घाटन निम्न शीर्षकों में किया जा सकता है :

1) भाषा की समास शक्ति :-

कम शब्दों में अधिक भाव व्यक्त करने के लिए भाषा की समास शक्ति का प्रयोग बिहारी ने किया है। बड़े-बड़े प्रसंगों को भी दोहे की दो पंक्तियों में समाविष्ट कर देने में उन्हें सफलता मिली है। गुरुजनों से ही वार्तालाप कर लेते हैं। इसका भरी सभा में नायक-नायिका किस प्रकार आँखों के संकेत से ही वार्तालाप कर लेते हैं इसका चित्रण निम्न दोहे में वे करते हैं :

कहत नटत रीझत खिझत मिलत खिलत लजियात।
भरे भौन में करत हैं नैननु ही सब बात॥

2) कल्पना की समाहार शक्ति :-

बिहारी की काव्य प्रतिभा का मूल कारण है- उनकी कल्पना शक्ति। दूर की सूझ को कल्पना के बल पर अपने दोहों में साकार करने की यह शक्ति विरले कवियों में दिखाई पड़ती है। इसी से उनके काव्य में सरसता, मधुरता, भाव चमत्कार और

इक भीजै चहलैं परैं बूड़े बहैं हजार।
किते न औगुन जग करै नै नै चढ़ती बार॥

गया है। मुतालब था और नदी मे समाना आजकर उन्होने उसे मात्र ही दोहे मे समावेश कर दिया :

3) चमत्कार प्रदर्शन :-

बिहारी ने अपने युग के अनुरूप ही कविता मे चमत्कार प्रदर्शन की प्रवृत्ति का परिचय भी दिया है। श्लेष, यमक का चमत्कार उनके अनेक दोहो मे देखा जा सकता है। यथा निम्न दोहो मे कनक शब्द का दो बार प्रयोग अलग-अलग अर्थो मे करते हुए यमक का विधान किया गया है :

कनक कनक तै सौगुनी मादकता अधिकाय।
जहिं खाये बौराय इहिं पाये ही बौराय॥

इन शब्दालंकारो के प्रयोग से बिहारी प्राय दोहरे अर्थो का समावेश अर्थ मे करके चमत्कार सृष्टि करते है।

4) बहुज्ञता का प्रदर्शन :

बिहारी को अनेक विषयो की अच्छी जानकारी थी। ज्योतिष, गणित, आयुर्वेद, इतिहास-पुराण आदि का ज्ञान उन्हे था क्योंकि उन्होने अपने दोहो मे इन विषयो का प्रयोग किया है। उदाहरण के लिए ज्योतिष ज्ञान की जानकारी निम्न सोरठे से सिद्ध होती है।

इक भीजे चहलैं परैं बूड़े बहैं हजार।
किते न औगुन जग करै नै नै चढ़ती बार॥

गया है। मृतिमरशा और नदी मे समानता खोजकर उन्होने उसे एक ही दोहे मे समावित्र कर दिया :

3) चमत्कार प्रदर्शन :-

बिहारी ने अपने युग के अनुरूप ही कविता मे चमत्कार प्रदर्शन की प्रवृत्ति का परिचय भी दिया है। श्लेष, यमक का चमत्कार उनके अनेक दोहो मे देखा जा सकता है। यथा निम्न दोहे मे कनक शब्द का दो बार प्रयोग अलग अलग अर्थो मे करते हुए यमक का विधान किया गया है :

कनक कनक तै सौगुनी मादकता अधिकाय।
जहिं खाये बौराय इहिं पाये ही बौराय॥

इन शब्दालंकारो के प्रयोग से बिहारी प्रायः दोहरे अर्थो का समावेश अर्थ मे करके चमत्कार सृष्टि करते है।

4) बहुज्ञता का प्रदर्शन :

बिहारी को अनेक विषयो की अच्छी जानकारी थी। ज्योतिष, गणित, आयुर्वेद, इतिहास-पुराण आदि का ज्ञान उन्हे था क्योंकि उन्होंने अपने दोहो मे इन विषयो का प्रयोग किया है। उदाहरण के लिए ज्योतिष ज्ञान की जानकारी निम्न सोरठे से सिद्ध होती है।

PAGE NO
DATE

मँगल बिन्दु सुरँग, मुख ससि केसर आड़ गुरु।
इक नारी लहि संग, रसमय किय लोचन जगत॥

इस दोहे में वर्षा योग को नायिका पर घटित दिखाया गया है नायिका पन्द्रमुखी है, मस्तक पर लगी लाल बिन्दी ही मँगल ग्रह है और केसर का पीला तिलक ही बृहस्पति है। इस प्रकार एक ही स्त्री (नारी) ने इन ग्रहों को साथ पाकर प्रेम रूपी जल की वर्षा का विधान नेत्र रूपी संसार में कर दिया है।

5) शृँगार रस की प्रधानता :-

बिहारी सतसई मूलतः शृँगार रस से ओत-प्रोत काव्य ग्रन्थ है। शृँगार के दोनों ही पक्ष संयोग और वियोग इसमें समाहित किया गया है। उन्होंने नायिका के अँग-प्रत्यँग के सौन्दर्य का सरस चित्रण तो किया ही है, साथ ही साथ नायक नायिका की प्रेम क्रीडाओं, हाव-भाव का भी विशद चित्रण किया है। राधा-कृष्ण की यह क्रीडा कितनी आकर्षक है:

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै भौंहनु हँसै दैन कहै नटि जाय॥

6) प्रकृति चित्रण :-

बिहारी ने प्रकृति का आलम्बन रूप में चित्रण करके अनेक मार्मिक दोहे लिखे है, जिनसे प्रकृति का साकार चित्र उपस्थित हो जाता है। गर्मी की ऋतु का यह वर्णन देखिए :

कहलाने एकत बसत अहि, मयूर, मृग बाघ।
जगत तपोवन से कियो दीरघ दाघ निदाघ।

गर्मी की प्रचण्डता से व्याकुल होकर सर्प, मोर, हिरन और बाघ एक स्थान पर बैठे है इस भयंकर ग्रीष्म ऋतु ने संसार को तपोवन के समान राग-द्वेष से रहित कर दिया है।

7) सरस प्रसंगो का वर्णन :

बिहारी ने जीवन के सरस प्रसंगो का अनायास ही अत्यन्त सुन्दर वर्णन कर दिया है जिससे प्रत्येक व्यक्ति आनन्दित हो सकता है; यथा नायिका ने नासिका को सिकोड़कर आँखे नचाते हुए और अपने पिता की सौगन्ध खाकर जो भौंहें चढ़ाकर बात की. उसकी वह भावभंगिमा नायक के हृदय में भीतर तक घुस गई है और निरन्तर करक रही है :

नासा मोरि नचाय दृग करी कका की सौंह।
काँटे सी कसकति हिय गहै कटीली भौंह ॥

8) व्यंजना सौन्दर्य :-

बिहारी के अनेक दोहों में अन्योक्ति एवं व्यंजना का सौन्दर्य दिखाई पड़ता है। उदाहरण के लिए निम्न दोहे को लिया जा सकता है, जिसमें सामान्य अर्थ तो भौरे और कली से सम्बन्धित है, किन्तु दूसरा व्यंग्यार्थ राजा जयसिंह से सम्बन्धित है:

बिहारी (1595-1663 ई)

बिहारी की सौन्दर्य भावना

बिहारी श्रृंगार के रससिद्ध कवि हैं। नारी, प्रकृति एवं भाव सौन्दर्य के चितेरे बिहारी की एकमात्र कृति 'बिहारी सतसई' का जितना मान-सम्मान हिन्दी जगत मे हुआ उतना बहुत कम ग्रन्थों को मिल पाता है। इसका एक-एक दोहा एक-एक रत्न माना जाता है। बिहारी सतसई की पचासों टीकाएँ अब तक हो चुकी हैं। मुक्तक शैली मे रचित इस कृति मे वे सभी गुण विद्यमान हैं जो सफल मुक्तक काव्य के लिए आवश्यक माने गए हैं।

बिहारी सौन्दर्य के चितेरे हैं। वे सौन्दर्य की सत्ता 'आत्मगत' मानते हैं 'वस्तुगत' नहीं। यह तो देखने वाले की दृष्टि है जो किसी भी चीज को सुन्दर बना देती है। कोई वस्तु अपने मे सुन्दर या असुन्दर नहीं होती। मन जिधर और जितनी रुचि दिखाता है, वह वस्तु हमे उतनी ही सुन्दर प्रतीत होने लगती है:

समै समै सुन्दर सबै रूप कुरूप न कोय।
मन की रुचि जेती जितै तित तेती रुचि होय॥

स्पष्ट ही बिहारी 'द्रष्टा' की दृष्टि मे सौन्दर्य मानते हैं। वस्तु वही है, पर एक समय मे वही सुन्दर और दूसरे समय मे वही कुरूप प्रतीत होती है। बिहारी

की मान्यता है कि सौन्दर्य की छटा तो प्रतिपल परिवर्तित होती है, यही उसकी नवीनता है और इसी कारण वह कभी पुराना नहीं पड़ता। नायिका के सौन्दर्य का चित्रण करने के लिए बड़े-बड़े चतुर चित्रकारों ने प्रयास किया पर वे सब मूढ़मति सिद्ध हुए, कोई भी उसकी सही तस्वीर नहीं उतार पाया क्योंकि तस्वीर बनाने के बाद जब 'असल' से उसका मिलान किया जाता तो उसमें बहुत कुछ परिवर्तन हो चुका होता;

लिखन बैठि जाकी सबी गहि-गहि गरब गरूर।
भए न केते जगत के चतुर चितेरे कूर॥

बिहारी नारी सौन्दर्य के चितेरे हैं। उसके अंग-प्रत्यंग का मनोहर व चित्ताकर्षक चित्र 'सतसई' में उन्होंने अंकित किया है:

अंग-अंग छबि की लपटि उपटति जाति अछेह।
खरी पातरीऊ तऊ लगै भरी सी देह॥

नायिका के अंग-प्रत्यंग से सौन्दर्य की ऐसी लपटें उठ रही हैं कि वह अत्यधिक दुबली-पतली होने पर भी सौन्दर्य की परतों के कारण भरे हुए शरीर वाली (अर्थात हृष्ट-पुष्ट) लग रही है।

नायिका के नेत्र श्रृंगार रस में स्नान किए हुए हैं, उनमें से श्रृंगार रस टपक सा रहा है। वे नेत्र अपनी स्वाभाविक श्यामता से ऐसे काले हैं कि बिना

काजल लगाया हुआ भी वे खंजन पक्षी को लज्जित कर देते हैं:

रस सिंगार मज्जनु किया कंजनु भंजनु देन।
अंजनु रंजनु हू बिना खंजन गंजन नैना।

नायिका का सुन्दर मुख पूर्णिमा के चन्द्र की भाँति प्रकाशित हो रहा है। उसके मुख की आभा के प्रकाश से वहाँ सदैव पूर्णिमा ही रहती है, अतः तिथि जानने के लिए वहाँ तो 'तिथिपत्र' का ही आश्रय लेना पड़ता है:

पत्रा ही तिथि पाइए वा घर के चहुँ पास।
नित प्रति पून्यो ही रहत आनन ओप उजास।

बिहारी ने केवल नायिका के सौन्दर्य का ही वर्णन नहीं किया अपितु नायक के सौन्दर्य का भी चित्रण किया है। एक नायिका अपने नेत्रों की दशा का वर्णन करती हुई दूसरी सखी से कहती है:

हरि छवि जल जब ते परे तब ते छिन बिछुरै ना।
भरत, ढरत, बूड़त, तरत, रहत घरी लौ नैन।

नायक के अंग-प्रत्यंग की शोभा में नायिका का चित्त इस प्रकार हो गया है जैसे भंवर में पड़ी नाव जो बार-बार वहीं चक्कर लगाती है और अन्ततः उसमें

ढुल जाती है :

फिरि फिरि चितु उत ही रहत टुटी लाज की लाव।
अंग अंग छवि झौर में भयो भौर की नाव॥

बिहारी की धारणा है कि सौन्दर्य का प्राण तत्व तो प्रेम ही है। सौन्दर्य की सार्थकता प्रेम भरी दृष्टि से ही है। यदि सुन्दरता को किसी ने प्रेम भरी दृष्टि से नहीं देखा तो उस सौन्दर्य की सार्थकता पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। शरीर भी उतनी ही शोभा धारण करता है जितना प्रेम उसके प्रति रहता है :

जद्यपि सुन्दर सुघर पुनि सगुनौ दीपक देह।
तऊ प्रकास करै तितौ भरियै जितौ सनेह॥

बिहारी सतसई में नारी सौन्दर्य के साथ-साथ भाव सौन्दर्य एवं प्रकृति सौन्दर्य की छटा भी विद्यमान है। सौन्दर्य बाह्य रूपाकार में नहीं होता अपितु उसकी सत्ता आन्तरिक होती है। नेत्रों के सौन्दर्य का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए बिहारी कहते हैं कि युवावस्था में प्राय: सभी तरुणियों के नेत्र नुकीले एवं बड़े-बड़े हो जाते हैं, किन्तु दृष्टि निक्षेप की कला तो किसी ही किसी (विरली युवती) में होती है :

PAGE NO:
DATE:

अनियारे दीरघ दृगनि किती न तरुनि समान।
वह चितवनि औरे कछू जिहि बस होत सुजान ॥

भाव सौन्दर्य के अन्तर्गत बिहारी ने हाव, भाव तथा अनुभाव योजना के द्वारा रमणीय दृश्यों का विधान किया है। यथा प्रथम समागम के अवसर पर नायिका की चेष्टाओं का सौन्दर्य देखते ही बनता है :

भौहनु त्रासति मुख नटति आँखिनु सौं लपटाति।
ऐंचि छुडावति करु इंची आगे आवति जाति।

भौंहों से डराती है, मुख से ना-ना करती है, किन्तु आँखे कुछ और कहकर लिपटती सी जान पड़ती है। हाथ खींचकर छुड़ाने का प्रयास करती है, किन्तु इस प्रक्रिया मे स्वयं आगे खिंची चली आती है।

राधा-कृष्ण की चेष्टाओं वाक्य विनोद तथा उनमे चलनेवाले परिहास का भी सुन्दर चित्रण बिहारी ने अपने निम्न दोहे मे किया है :

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै भौंहनु हँसै देन कहै नटि जाय।

वार्तालाप के लालच मे राधा ने कृष्ण की मुरली छिपाकर रख दी है। जब कृष्ण मुरली माँगते है तो वह सौगन्ध खाकर कहती है कि मैंने तुम्हारी मुरली नहीं ली किन्तु कृष्ण समझ जाते हैं कि मुरली इसी के पास है

क्योंकि राधा अपनी भौंहों में ही चातुरता से मुस्काती है। कृष्ण जब उसकी चालाकी ताड़कर अपनी मुरली मांगते है तो वह फिर मुकर जाती है।

प्रकृति सौन्दर्य के भी विविध रूप सतसई मे उपलब्ध होते है। वासन्ती पवन का चित्रण उसकी समस्त विशेषताओं के साथ बिहारी ने हाथी के सांगरूपक से निम्न दोहे मे किया है:

रनित भृंग घण्टावली झरित दान मधु नीर।
मन्द-मन्द आवत, चल्यो कुँजर कुँज समीर॥

भ्रमर रूपी घण्टावली को बजाता हुआ, मकरन्द रूपी मद को गिराता हुआ कुँज समीर रूपी कुँजर (हाथी) मन्द-मन्द चला आ रहा है वासन्ती पवन की तीनों विशेषताएँ शीतल, मन्द सुगन्ध यहाँ दिखाई गई है।

बिहारी सौन्दर्य के कुशल चितेरे है। सौंदर्य की विविध छटाएँ उनके काव्य मे दिखाई पड़ती है। उनके काव्य की विषय वस्तु भी आकर्षक है तथा उनकी अभिव्यक्ति क्षमता भी उसी परिमाण मे रमणीय है। यही कारण है कि उनकी सतसई अत्यन्त लोकप्रिय रचना है। दोहे जैसे छोटे छन्द मे इतने सार भावों का समावेश रखना है करने के कारण ही यह कहा जाता है कि उन्होंने गागर मे सागर भर दिया है। बिहारी सतसई के दोहों की प्रशंसा करते हुए इसीलिए एक आलोचक ने कहा है:

PAGE NO.:
DATE : / /

सतसैया के दोहरे ज्यों नाविक के तीर।
देखन में छोटे लगैं घाव करैं गम्भीर:

निश्चय ही बिहारी सौन्दर्य के कवि हैं। सुन्दरता को देखकर उसको इस रूप में प्रस्तुत कि वह दूसरों को भी चित्ताकर्षक लगे, समर्थ कवि की क्षमता ही होती है। कहना न होगा कि बिहारी इस कार्य में पूर्ण सफल रहे हैं।